www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
सोमवार 7 अक्टूबर 2019

दैनिक जागरण
सफलता की सीढ़ी एक-एक पायदान पार करके ही चढ़ी जाती है

कांग्रेस की दशा

चुनावों के पहले राजनीतिक दलों में हलचल देखने को मिलती ही है, लेकिन हरियाणा और महाराष्ट्र में विधानसभा चुनावों के पहले कांग्रेसी नेताओं के बीच जैसी उठापटक देखने को मिल रही है वह अभूतपूर्व है। एक ओर जहां हरियाणा कांग्रेस के पूर्व अध्यक्ष अशोक तंवर ने टिकट बंटवारे से नाराज होकर पार्टी छोड़ दी वहीं दूसरी ओर मुंबई कांग्रेस के पूर्व अध्यक्ष संजय निरुपम पार्टी छोड़ने की कगार पर जाकर खड़े हो गए। इन दोनों ने अपने ही नेताओं पर गंभीर आरोप लगाए। अशोक तंवर ने इस्तीफा देने के पहले कांग्रेस मुख्यालय के बाहर प्रदर्शन किया तो संजय निरुपम ने संवाददाता सम्मेलन कर पार्टी को खुली चुनौती दी। इन दोनों नेताओं ने बागी तेवर दिखाने के साथ ही यह रेखांकित करने की भी कोशिश की कि उन्हें राहुल गांधी के करीबी होने के कारण किनारे किया गया। क्या वाकई ऐसा कुछ है? इस बारे में साफ तौर पर कुछ नहीं कहा जा सकता, लेकिन इससे हर कोई भलीभांति परिचित है कि कांग्रेस की युवा पीढ़ी के नेताओं और बुजुर्ग नेताओं के बीच एक अरसे से खींचतान जारी है।

युवा और बुजुर्ग कांग्रेसी नेताओं के बीच खींचतान की एक झलक तब मिली थी जब लोकसभा चुनाव के बाद राहुल गांधी की ओर से अध्यक्ष पद छोड़ने की पेशकश की गई थी। उस दौरान जब पार्टी के युवा नेता राहुल गांधी के अध्यक्ष बने रहने पर जोर दे रहे थे तो बुजुर्ग नेता या तो मौन साधे थे या फिर विकल्प सुझा रहे थे। लंबे इंतजार के बाद राहुल का त्यागपत्र स्वीकृत तो हुआ, लेकिन अंतरिम अध्यक्ष के रूप में सोनिया गांधी का चयन करना बेहतर समझा गया। इससे यही संदेश निकला कि गांधी परिवार पार्टी पर अपनी पकड़ छोड़ने के लिए तैयार नहीं। इस संदेश की एक वजह प्रियंका गांधी वाड्रा का अपने पद पर कायम रहना भी था, जिन्हें लोकसभा चुनाव के ठीक पहले कांग्रेस महासचिव बना दिया गया था। जिस तरह यह स्पष्ट नहीं कि कांग्रेस को अगला पूर्णकालिक अध्यक्ष कब मिलेगा उसी तरह यह भी साफ नहीं कि पार्टी अपनी खोई हुई जमीन हासिल करने के लिए प्रयोग करना कब छोड़ेगी? यह ठीक नहीं कि जब देश को एक सशक्त विपक्ष की सख्त जरूरत है तब कांग्रेस असमंजस से बुरी तरह ग्रस्त है। इसमें संदेह है कि वह हरियाणा और महाराष्ट्र में कुछ हासिल कर सकेगी। इन राज्यों के साथ देश के अन्य हिस्सों में भी वह दयनीय दशा में है। अपनी इस स्थिति के लिए वह खुद के अलावा अन्य किसी को दोष नहीं दे सकती। वास्तव में उसका भला तब तक नहीं हो सकता जब तक वह नेतृत्व के सवाल को ईमानदारी से हल नहीं करती।

तेज हो राहत कार्य

बाढ़ हर साल की नियति है, लेकिन पटना भी इस तरह डूबेगा, इसकी किसी ने कल्पना नहीं की थी। अभी पहली प्राथमिकता पीड़ितों को तत्काल राहत देने की होनी चाहिए। सरकारी तंत्र को भी पूरी संवेदनशीलता के साथ इसमें जुटना होगा। लोग जो विपदा झेल रहे हैं, उससे उबरने में काफी वक्त लगेगा। इसलिए राहत कार्य युद्धस्तर पर चलाया जाना चाहिए। बाढ़ वाले गांवों में सामुदायिक रसोई खोले जाने का मुख्यमंत्री नीतीश कुमार का आदेश सराहनीय पहल है। बाढ़ पीड़ितों को भोजन मुहैया कराया जाना बहुत जरूरी है, क्योंकि उनका सब कुछ लुट चुका है। बच्चों, महिलाओं और बुजुर्गों के लिए तो और भी विषम परिस्थिति है। प्रशासनिक मशीनरी को इसे सिर्फ ड्यूटी के रूप में नहीं लेना होगा, राहत कार्य में पूरी संवेदनशीलता के साथ जुटना होगा। विपत्ति आ गई है तो अभी ज्यादा से ज्यादा राहत कैसे पहुंचा सकें, यही प्राथमिकता होनी चाहिए, लेकिन इससे उबरने के बाद इस पर भी गंभीरता से मंथन की जरूरत है कि आखिर यह परिस्थिति क्यों पैदा हुई। जहां हर साल बाढ़ आती है, वहां की परिस्थितियां तो समझी जा सकती हैं, लोग भी सचेत रहते हैं, लेकिन पटना में स्थिति भयावह होती है तो भविष्य के लिए भी एक कड़ी चेतावनी है। जल निकासी प्रबंधन, सिवरेज सिस्टम, योजनाओं के कार्यान्वयन समेत हर पहलू की गंभीरता से न सिर्फ समीक्षा, बल्कि इसमें लापरवाही बरतने वालों को दंडित किए जाने की भी जरूरत है। ऐसी जगहों से बिना भेदभाव के साथ सख्ती से अतिक्रमण हटाकर उसे पुराने स्वरूप में लाना होगा। वहीं प्राकृतिक संतुलन के प्रति चेत जाने की भी जरूरत है, अन्यथा आने वाला कल इससे भी भयावह हो तो कोई आश्चर्य नहीं। यह अच्छी बात है कि सरकार ने जल जंगल हरियाली मिशन की शुरुआत कर दी है। इस पर कड़ी नजर रखनी होगी कि आंकड़े सिर्फ कागजों में दर्ज नहीं हों, बल्कि जमीन पर भी दिखें। एक अच्छी पहल हुई है तो इसे अमली जामा पहनाने की दिशा में सबको मिलजुल कर आगे आने की जरूरत है।

> बाढ़ हर साल की नियति है, लेकिन पटना भी इस तरह डूबेगा, इसकी किसी ने कल्पना नहीं की थी। अभी पहली प्राथमिकता पीड़ितों को तत्काल राहत देने की होनी चाहिए

खुद लड़नी होगी आतंक से लड़ाई

ब्रह्मा चेलानी

> पाकिस्तानी आतंकवाद से निपटने में अमेरिका सहित कोई भी मित्र देश उतना मददगार नहीं होगा। यह भारत की लड़ाई है जो उसे खुद ही लड़कर जीतनी होगी

अवधेश राजपूत

जिहादी आतंकवाद के लगातार सिर उठाते वैश्विक दानव के खिलाफ संघर्ष में भारत और अमेरिका स्वाभाविक सहयोगी हैं। मोदी की ह्यूस्टन रैली में अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने भी यह संकल्प दोहराया। वहां दोनों नेता सुरक्षा से जुड़े तमाम मसलों पर एक सुर में बोलते सुनाई पड़े। ऐसे परस्पर हितों को देखते हुए भारत-अमेरिका आतंक विरोधी सहयोग की कड़ी और मजबूत होनी चाहिए थी। वहीं पाकिस्तान के साथ अमेरिकी रिश्ते भी अब तक टूट जाने चाहिए थे। मगर हमें कुछ और ही दिख रहा है। मसलन ट्रंप आतंक को बढ़ावा देने वाले पाकिस्तान और उसके भुक्तभोगी भारत के बीच अजीबोगरीब तुलना करने पर तुले हैं। सूत्रों के मुताबिक ट्रंप ने निजी बातचीत में पीएम मोदी को पाक से संबंध सुधारने के लिए प्रेरित किया। फिर सार्वजनिक रूप से यह कहा कि दोनों देश परमाणु शक्ति संपन्न देश हैं और उन्हें कोई कारगर हल निकालना ही होगा।

कुछ दिन बाद ट्रंप ने पाकिस्तान को आतंक की धुरी मानने के बजाय ईरान को उससे कहीं बड़ा आतंकी देश बताया। यहां तक कि मोदी की मौजूदगी में भी पाक को लेकर दागे गए सीधे सवाल पर ट्रंप ने गोलमोल जवाब ही दिया। एक ऐसे देश में जहां संयुक्त राष्ट्र द्वारा घोषित 25 दुर्दांत आतंकी बसेरा बसाए हुए हैं, उस पाकिस्तान को आतंक का गढ़ मानने से ट्रंप की हिचक भारत-अमेरिका आतंक विरोधी सहयोग की सीमाओं को ही रेखांकित करती है। अमेरिका अभी भी नई दिल्ली और इस्लामाबाद की वक्त-वक्त पर पीठ थपथपाने के खेल में लगा है। वह अपनी नीतियों में इस्लामाबाद को नई दिल्ली के साथ जोड़कर देख रहा है। ऐसा इस तथ्य के बावजूद कि वाशिंगटन के आर्थिक एवं भू-राजनीतिक हितों के लिहाज से अब भारत उसके लिए कहीं अधिक अहम है। पाकिस्तान के साथ अमेरिकी व्यापार महज 6.6 अरब डॉलर है वहीं भारत के साथ यह 150 अरब डॉलर के स्तर पर पहुंचने जा रहा है।

अमेरिका का अफगानिस्तान में अधूरा एजेंडा भी इस्लामाबाद से वाशिंगटन के अब तक कायम लगाव की वजह हो सकती है। मगर ऐसी कोई गलतफहमी न रखें कि अफगानिस्तान में संघर्ष समाप्त होने के बाद भी अमेरिका आतंकियों से नजदीकी जुड़ाव पर पाकिस्तान को किसी प्रकार दंडित करेगा। असल में पाक के साथ अमेरिकी सक्रियता उसे भारत की तुलना में ज्यादा लाभ की गुंजाइश देती है। चीन जैसे पाक को भारत के खिलाफ मोहरे के रूप में इस्तेमाल करता है उसे देखते हुए फायदे की यह सौगात कहीं बड़ी दिखती है।

इसी कारण अमेरिका पाकिस्तान को अपनी नीति में आतंक के इस्तेमाल, परमाणु हथियारों के जखीरे, चीन से मिलने वाली मिसाइल तकनीकों और भारत को दी जा रही परमाणु धमकियों की अनदेखी करता रहा है। अगर अमेरिका को पाकिस्तानी धरती पर पनपने वाले किसी आतंकी खतरे की फिक्र होती है तो केवल उसी की जो अफगानिस्तान में उसके सुरक्षा बलों के लिए जोखिम पैदा करते हैं। उसने हक्कानी नेटवर्क पर लगाम लगाने और अफगान तालिबान को वार्ता के लिए तैयार करने को लेकर पाक पर दबाव डाला, मगर भारत को लहूलुहान करने वाले पाकिस्तानी आतंकी संगठनों के मामले में अमेरिकी कार्रवाई केवल काली सूची में डालने और संयुक्त राष्ट्र में भी ऐसी कवायद कराने तक सीमित रहती है। यह सब प्रतीकात्मक ही हैं। अंतरराष्ट्रीय आतंकी हाफिज सईद को एक हजार डॉलर प्रतिमाह का भत्ता दिलाने के पाकिस्तानी प्रस्ताव को मिली हालिया मंजूरी इसकी मिसाल है। सईद पर 2012 से ही घोषित एक करोड़ डॉलर का अमेरिकी इनाम भी महज दिखावटी है।

पुलवामा के कुछ दिन बाद ही अमेरिकी सहयोग से पाकिस्तानी आतंकी मसूद अजहर को संयुक्त राष्ट्र की सूची में शामिल कराने में मदद मिली। मगर इसके कुछ हफ्तों के भीतर ही बलूच लिबरेशन आर्मी को अमेरिका ने आतंकी संगठन का दर्जा दे दिया। इसकी आड़ में पाक को बलूचिस्तान में निर्ममतापूर्वक दमन के लिए खुली छूट मिल गई। सईद पर सख्ती को संतुलित करने के लिए अमेरिका ने पिछले साल तहरीके तालिबान के तीन वांछितों पर 1.1 करोड़ डॉलर का इनाम रखा। यहां तक कि उसने उसके तीन प्रमुखों को मौत के घाट उतार दिया और नए मुखिया को भी आतंकी घोषित कर दिया। यह विडंबना है कि दुनिया के सबसे भयावह आतंकी हमले करने वाला अफगान तालिबान अभी तक अमेरिका की आतंकियों वाली सूची में शामिल नहीं हुआ है।

ऐसे विरोधाभास और भी मुखर हैं। ईरान पर अमेरिका ने बेहद सख्त प्रतिबंध लगाए हुए हैं जबकि आतंक की असली धुरी पाकिस्तान के साथ वह नरमी से पेश आ रहा है। पाक की खस्ताहाल अर्थव्यवस्था को सहारा देने के लिए उसने आइएमएफ से राहत पैकेज दिलाने में मदद की। अमेरिका ने ईरान की इस्लामिक रिवोल्यूशन गार्ड्स कॉर्प्स और कुछ व्यक्तियों पर तो आतंकी पाबंदियां लगाईं, लेकिन आतंक की सबसे बड़ी निर्यातक पाकिस्तानी फौज या उसके किसी जनरल या खुफिया अधिकारी पर कभी ऐसे प्रतिबंध नहीं लगाए। आइएमएफ राहत और इमरान के साथ हालिया बैठकों को देखकर लगता है कि 13-18 अक्टूबर को होने वाली फाइनेंशियल एक्शन टास्क फोर्स यानी एफएटीएफ की बैठक में अमेरिका पाक के खिलाफ शायद ही किसी प्रस्ताव का समर्थन करे। इस अंतरराष्ट्रीय निगरानी संस्था का आकलन है कि आतंकियों को वित्तीय मदद रोकने के अधिकांश मानकों को पूरा करने में पाकिस्तान नाकाम रहा है। अमेरिका नहीं चाहता कि फिलहाल एफएटीएफ पाकिस्तान को अपनी ग्रे सूची से काली सूची में डाले। असल में अपने भू-राजनीतिक हितों के चलते अमेरिका बिगड़ैल पाकिस्तान को सुधारने के माकूल मौके को हाथ से निकलने दे रहा है।

विरोधाभासों की सूची बहुत लंबी है। एक तरफ अमेरिका भारत को हिंद-प्रशांत रणनीति में अहम मानता है, वहीं दोनों देशों के सुरक्षा हितों की दिशा भारत के पड़ोस में ही बिगड़ी हुई है। अमेरिका भारत को ईरान से दूर रहने पर दबाव डाल रहा है वहीं चीन को छूट दे रहा है। ईरान से सस्ते तेल आयात पर प्रतिबंध के चलते भारत का आयात बिल बढ़ रहा है। भारत के हाथ से चाबहार परियोजना के छिटकने का जोखिम भी बढ़ गया है, क्योंकि चीन ईरान में 280 अरब डॉलर का निवेश करने जा रहा है।

वैश्विक स्तर पर आतंक के खिलाफ लड़ाई के राजनीतिकरण से जुड़े खतरे के प्रति आगाह करके मोदी ने सही किया। आतंक के खिलाफ अमेरिकी नेतृत्व वाली मुहिम इसीलिए नाकाम रही, क्योंकि यह भू-राजनीतिक हितों को पोषित करने का जरिया बन गई। भारत के लिए इसका सार यही है कि पाकिस्तानी आतंकवाद को खत्म करने में अमेरिका सहित कोई भी दोस्त वास्तविक रूप से मददगार नहीं होगा। यह भारत की अपनी लड़ाई है और उसे अपने दम पर ही जीतना होगा। अमेरिकी मदद की अपेक्षा भारत-पाकिस्तान रिश्तों में एक अंशभागी के रूप में वाशिंगटन के दावे को ही पुष्ट करेगी।

(लेखक नई दिल्ली स्थित सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च में स्ट्रेटेजिक स्टडीज के प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

गांधीवादी मूल्यों को अपनाने का समय

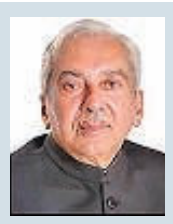

जगमोहन सिंह राजपूत

> गांधी जी ने कहा था कि हर किसी को अपने मत-पंथ के अनुसार अच्छा व्यक्ति बनने का प्रयास करना चाहिए

'मेरा जीवन ही मेरा संदेश है।' गांधी जी के इस कथन को हम अपने मन-मस्तिष्क में उतार कर जितनी गहराई से समझाने का प्रयास करते हैं, उतना ही यह अधिक विस्तार पाता जाता है। गांधी जी पूर्णता के लक्ष्य के मार्ग पर, जिसमें सत्य ही ईश्वर है, चले और चलते रहे। श्रद्धा और निष्ठा से चलते हुए वे आगे ही बढ़ते रहे। कितना और कहां तक पहुंचे, इसका अनुमान तो सदियों तक इतिहास लगाता रहेगा। परंपरागत परिवार में मोहनदास करमचंद गांधी को जो संस्कार मिले थे उनमें मानवीयता के समग्र तत्वों के साथ-साथ ऊंच-नीच, छुआछूत जैसे अस्वीकार्य तत्व भी प्रचलन में थे जो अज्ञान तथा अशिक्षा के कारण समाज में अपनी पकड़ बना चुके थे। दूसरी तरफ वे सद्गुण और विचार भी थे जो व्यक्ति को मनुष्य बनाते हैं।

गांधी जी के जीवन की कुछ घटनाएं इस प्रकार हैं। जैसे कि उन्होंने अध्यापक के इंगित करने के बाद भी कक्षा में नकल नहीं की। तरुणाई में सामान्य-सुलभ जिज्ञासा में मांस खाया। भाई का कर्ज चुकाने के लिए चोरी में भागीदारी की। फिर संस्कारों ने उन्हें विचलित किया। उन्होंने पत्र लिखकर पिता से क्षमा मांगी। पिता ने पत्र पढ़कर कुछ नहीं कहा। मोहनदास केवल उनके अश्रुपात को देखते रहे। मन-मस्तिष्क में उठे तूफान ने आगे के लिए उनका मार्ग प्रशस्त किया। यूरोप और दक्षिण अफ्रीका में उन्हें धर्म-परिवर्तन के प्रयासों से पाला पड़ा। एक विचारवान और चिंतनशील व्यक्ति की भांति उन्होंने ईसाई तथा अन्य धर्मों-पंथों का अध्ययन किया। घर और परिवार से प्राप्त संस्कारों के कारण उन्हें अस्वीकृत नहीं किया। विश्लेषण के बाद अपने पंथ को ही अपने लिए सर्वोत्तम पाया। किसी को कम-ज्यादा नहीं पाया। इसका तो कोई प्रश्न ही नहीं था कि मेरा रास्ता ही सर्वोत्तम है, बाकी सभी अस्वीकार्य हैं! वे पूरे जीवन यही कहते रहे कि हर व्यक्ति को अपने मत-पंथ के अनुसार अच्छा हिंदू, मुसलमान, ईसाई या सिख बनने का प्रयास करना चाहिए। प्राचीन भारत की संस्कृति की वैचारिक परिपक्वता में पंथ परिवर्तन के लिए किसी प्रकार के प्रयासों के लिए कोई जगह नहीं थी। हर वैचारिक विविधता इसमें स्वीकार्य थी, ईश्वर को मानें या न मानें, निर्गुण, सगुण, नास्तिक सभी अपने, सभी स्वीकार्य! आगे चलकर महात्मा गांधी यह कह सके कि सभी धर्म ईश्वरीय हैं, मगर सभी अपूर्ण हैं। सभी को समय के साथ गतिशीलता तो अपनानी ही होगी। सभी का अंतिम गंतव्य एक ही है। रास्ते अलग अलग हैं और हर रास्ता उस गंतव्य तक पहुंचाने में समर्थ है।

अगर गांधी के जीवन का यह एक सिद्धांत ही मान लिया जाता तो क्या विश्व में इतनी हिंसा, अविश्वास, नरसंहार पनप पाता? इस तथ्य को राजनेता भले कहने में हिचकें, मगर पंथिक विविधता की अस्वीकार्यता, अन्य पंथों के प्रति असहिष्णुता और केवल अपने रास्ते को एकमात्र सच और सही मानना तथा उसी में किसी भी प्रकार से अन्य को लाने को अपना ईश्वरीय उत्तरदायित्व समझ लेना विश्व शांति और सद्भाव को कभी आगे नहीं बढ़ने देगा। इस सच्चाई से आंखें मूंदना अब बंद होना चाहिए। आगे का रास्ता वही है जो गांधी जी ने समझा, अपनाया और समझाया। यह वर्तमान और भावी पीढ़ी का उत्तरदायित्व है कि वह विश्व जनमत को समझाए कि सभी पंथिक विविधता की आवश्यकता को मन, वचन और कर्म से स्वीकारे, व्यवहार में सबको समानता दे और किसी भी प्रकार के लालच तथा प्रलोभन द्वारा पंथिक परिवर्तन के प्रयास अस्वीकार्य घोषित हों। इससे भारत में ही नहीं, पूरे विश्व में बड़े संप्रदायों के बीच वैमनस्यता बढ़ती है।

अब वह समय नहीं है जब मध्यकालीन परंपराएं या सामाजिक वैचारिकता उसी स्वरूप में लागू रहेंगी। परिवर्तन की गति को पहचानना हर समुदाय के लिए आवश्यक है। गांधी ने छुआछूत, मंदिर प्रवेश, महिलाओं का सम्मान, बराबरी का हक जैसी समस्याओं के प्रति लोगों को जागृत और जागरूक किया। वह इसमें आंशिक रूप से ही सफल हुए, मगर उनके जाने के बाद भी समाज उनकी इच्छाओं के अनुसार अपने में परिवर्तन करता जा रहा है। इसे आगे ले जाना होगा।

परंपरागत भारतीय समाज सभी पंथों की उपस्थिति को स्वीकारता है। गांधी जी मानते थे कि जब अंग्रेज यहां नहीं आए थे तब हिंदू, मुसलमान, सिख तथा अन्य आपस में लड़ते ही नहीं रहते थे। आश्चर्य की बात है कि 1931 में ही भारत की भावी राजनीति का स्पष्ट आभास और अनुमान गांधी जी को हो गया था। तब उन्होंने कहा था, 'मुझे इस बात का पूरा निश्चय है कि यदि नेता न लड़ना चाहें तो आम जनता को लड़ना पसंद नहीं है। इसलिए यदि नेता इस बात पर राजी हो जाएं कि दूसरे सभ्य देशों की तरह हमारे देश में भी आपसी लड़ाई-झगड़े का सार्वजनिक जीवन से नामोनिशान मिटा दिया जाना चाहिए और वे जंगलीपन तथा अधार्मिकता के चिन्ह माने जाने चाहिए तो मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि आम जनता शीघ्र ही उनका अनुकरण करेगी।' इस समय 150वीं जयंती के अवसर पर विश्व भर में गांधी जी पर गहन चर्चाएं हो रही हैं, वे जो कुछ कह गए और जिसे पश्चिम की चकाचौंध से आच्छादित भारतीय नेतृत्व ने परे कर दिया था, वे बातें आज लोगों की आंखें खोल रही हैं। उन्हीं के विचारों में वैश्विक समस्याओं का समाधान दिखाई दे रहा है। हिंसा, वैमनस्य, अविश्वास से ही गरीबी, भुखमरी, प्रताड़ना जन्म लेती हैं। लोगों के बीच सद्भाव और सहयोग बढ़ाने के लिए ही गांधी जी जीवन भर प्रयत्नशील रहे। उनके प्रत्येक विचार से लोग भले ही सहमत न हों, मगर उनकी नीयत के प्रति कोई संदेह हो ही नहीं सकता है।

16 मार्च, 1931 को दादर में मजदूरों के समक्ष गांधी जी ने धर्म परिवर्तन की व्याख्या की थी। वहां कहे उनके इन शब्दों में विश्व का सुनहरा भविष्य छिपा है, 'मैं यह बात हृदय की एकता के तकाजे पर और उसी की खातिर कह रहा हू। मैं इस देश के विभिन्न धर्मावलंबियों के बीच एकता स्थापित होते देखना चाहता हूं। प्रकृति में हम अपने चारों ओर जो विविधता देखते हैं उसके पीछे एक बुनियादी एकता है। धर्म भी इस प्राकृतिक नियम के अपवाद नहीं हैं। मनुष्य जगत को धर्म का दान इसलिए मिला है कि इस मौलिक एकता को चरितार्थ करने की प्रक्रिया को वह गति प्रदान कर सके।' इसमें और देरी अब स्वीकार्य नहीं है।

(लेखक एनसीईआरटी के निदेशक रह चुके हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

भक्ति

भगवान का असली भक्त श्रेय एवं सम्मान का कभी भी भूखा नहीं होता है। वह तो सदा भगवान की सेवा और भक्ति में निमग्न रहना ही जीवन का लक्ष्य समझता है तथा मन-ही-मन सदा श्रीराम सेवक हनुमान की तरह से सोचता रहता है-'राम काज बिनु मोहि कहां विश्राम।' भगवान की सेवा और भक्ति में सच्चा भक्त श्रद्धा-भाव से सहर्ष समर्पित जीवन जीता है। फिर उसे किसी प्रकार की सांसारिक चिंता नहीं रहती है। उसे सिर्फ भगवान की सेवा और भक्ति का ध्यान तथा चिंता हर पल मन में बनी रहती है। उसे भगवान से एक पल भी अलग रहना पसंद नहीं होता है। जिस प्रकार से मछली को पानी से निकाल देने से मछली की तड़पन और बेचैनी असहनीय प्रतीत होती है, उसी तरह की बेचैनी भक्त को भगवान से अलग रहने पर प्रतीत होती है। शरीर से प्राण निकलते शरीर मृत हो जाता है, ठीक उसी प्रकार से भगवान की भक्ति से अलग रहने पर भक्त की दशा भी मृत-प्राय हो जाती है।

भक्ति भगवान को हृदय में श्रद्धा से धारण करने की सोच होती है। जो भक्ति का दिखावा करते हैं, उनसे भगवान दूर हो जाते हैं। उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है। असली भक्त अपने समर्पित भाव से किए गए भगवान की सेवा को गुप्त रखता है और उसका ढिंढोरा लोगों के समक्ष नहीं पीटता है। जो अभक्त हैं, वे तो भगवान का कार्य भी नहीं करते हैं और दुख-सितम की प्रतिकूल परिस्थिति में अगर भगवान की सेवा थोड़ा भी कर लेते हैं तो उसे भी बढ़ा-चढ़ा कर भगवान का असली सेवक होने और सेवा करने का दावा समाज के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। ऐसे भक्तों से भगवान को कष्ट पहुंचता है।

भक्त को अपनी भक्ति का अहंकार नहीं होता है, वह तो भगवान की भक्ति में समर्पित होता है। भक्त से भगवान की पहचान जीवित रहती है। भक्त भगवान की भक्ति करके निर्भय हो जाता है। भक्ति में भक्त का असली संबल श्रद्धा होती है। जब तक श्रद्धा जीवित है तो भक्ति भी जीवित है और भगवान की भक्ति अवश्य होगी। इसलिए श्रद्धा को जीवित रखना जरूरी है।

मुकेश ऋषि

भव्यता नहीं, श्रद्धा की जरूरत

सुधीर कुमार

> प्लास्टर ऑफ पेरिस और कृत्रिम रंगों के प्रयोग से बनीं विसर्जित मूर्तियां जल को विषाक्त बना देती हैं

हाल ही में राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन की तरफ से गंगा और उसकी सहायक नदियों में प्रदूषण की बढ़ोतरी पर रोक लगाने के लिए 11 गंगा बेसिन राज्यों को मूर्ति विसर्जन के संबंध में दिशा-निर्देश जारी किया गया है। पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 की धारा 5 के तहत जारी किए गए इन निर्देशों में मूर्तियों के जलस्रोतों में विसर्जन पर रोक और इसके उल्लंघन पर 50 हजार रुपये के दंड के प्रावधान के अलावा मूर्तियों के निर्माण में प्लास्टर ऑफ पेरिस, पकी हुई मिट्टी, फाइबर और थर्मोकोल सहित जल में अघुलनशील पदार्थों के उपयोग पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया है!

भारत एक आस्था प्रधान देश है। यहां दशहरा, दीपावली, गणेश चतुर्थी, विश्वकर्मा पूजा तथा काली पूजा जैसे पर्व-त्योहारों के अवसर पर देवी-देवताओं की मूर्तियां स्थापित करने की परंपरा रही है। हालांकि पहले सैकड़ों लोगों के बीच भगवान की एक मूर्ति स्थापित की जाती थी, लेकिन अब प्रायः हरेक घर में और साल में एक से अधिक बार मूर्तियां स्थापित करने का प्रचलन बढ़ा है। पहले हमारे पास संसाधन कम थे तो मूर्तियां शुद्ध मिट्टी की बनाई जाती थीं जो पानी में स्वतः मिल जाती थीं, लेकिन अब प्लास्टर ऑफ पेरिस और कृत्रिम रंगों के प्रयोग से बनीं विसर्जित मूर्तियां जल को विषाक्त बना देती हैं। मूर्तियों की स्थापना जहां आस्था का विषय है, वहीं मूर्ति विसर्जन एक सामाजिक और पर्यावरणीय समस्या बन चुकी है। आज समाज में बड़ी और महंगी मूर्तियां स्थापित करने की होड़ मची है, लेकिन मूर्ति निर्माण में प्रयुक्त सामग्री पर्यावरण-अनुकूल है या नहीं, इस पर शायद ही गौर किया जाता है! ऐसे समय में जब देश की अधिकांश नदियां प्रदूषण के बोझ तले दबी जा रही हैं, तब प्लास्टर ऑफ पेरिस से निर्मित मूर्तियों और विभिन्न वस्तुओं को जलस्रोतों में प्रवाहित करने से जल की गुणवत्ता में ह्रास तो होता ही है, जलीय जीवों के लिए भी यह घातक साबित होता है। अतः जरूरी है कि आस्था और पर्यावरण के मध्य सामंजस्य स्थापित किया जाए।

जिस तरह हमारे लिए देवी-देवताओं की मूर्तियां पूजनीय हैं, उसी प्रकार नदियां भी पूजनीय हैं। पूजा आयोजन में प्रयुक्त मूर्ति एवं त्याज्य वस्तुओं का जलस्रोतों में अशोधित प्रवाह जलस्रोतों को प्रदूषित करता है। ऐसे में मूर्ति विसर्जन की परंपरा में बदलाव किए जाने की जरूरत है। मूर्ति विसर्जन के लिए प्रशासन द्वारा बनाए गए अस्थाई तालाब का ही प्रयोग करना चाहिए। कोशिश यह भी हो कि प्लास्टर ऑफ पेरिस से बनने वाली पर्यावरण-प्रतिकूल मूर्तियों के स्थान पर लुगदी या मिट्टी से बनने वाली मूर्तियां ही घरों या पंडालों में स्थापित करें। बैरिकेडिंग कर नागरिकों से चंदा के नाम पर मनमाना पैसे की उगाही के बजाय कम खर्च में ही पूजा-आयोजन की व्यवस्था की जाए। पूजा के नाम पर बेवजह धन की बर्बादी समाज-हित में नहीं है। ध्यान रहे, मन से की गई पूजा महंगी एवं दिखावटी पूजा से कहीं अधिक प्रभावी होती है। पूजा के लिए भव्यता नहीं, भक्ति और श्रद्धा की जरूरत होती है।

(लेखक बीएचयू में अध्येता हैं)

मेलबाक्स

पर्यावरण संरक्षण की उपेक्षा

'बिगड़ते पर्यावरण को बचाने की चुनौती' शीर्षक से लिखे अपने लेख में संजय गुप्त ने बिगड़ते पर्यावरण और उसके भयावह परिणामों पर विस्तृत राय रखी है। उन्होंने इसका प्रमुख कारण समाज में जागरूकता की कमी को बताया है, जो सही भी है। अनियंत्रित लोभ और तात्कालिक लाभ पाने की आकांक्षा ने हमारी आंखों पर ऐसा पर्दा डाल दिया है, जिसके आगे हम कुछ देखने को तैयार नहीं। यही कारण है कि सरकारों के तमाम आग्रहों के बावजूद पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में पराली जलाने की घटनाएं निर्बाध रूप से जारी हैं, पॉलीथिन एवं अन्य रूपों में सिंगल यूज प्लास्टिक का उपयोग भी लगभग खुल्लम-खुल्ला जारी है और नदियों से गैर कानूनी बालू का उठाव भी बदस्तूर जारी है। उधर डोनाल्ड ट्रंप के नेतृत्व में अमेरिका के लिए पर्यावरण संरक्षण की अपेक्षा अमेरिकी हितों का संरक्षण अधिक महत्वपूर्ण हो चला है। चीन जिसकी वैश्विक कार्बन उत्सर्जन में भागीदारी 25 प्रतिशत से भी ज्यादा है, अपने कोयले से चलने वाले पावर प्लांटों को बंद करने के लिए तैयार नहीं। भारत ने अवश्य पेरिस समझौते के प्रति प्रतिबद्धता जताई है। स्वयं प्रधानमंत्री मोदी देश को सिंगल यूज प्लास्टिक से मुक्त करने के मिशन पर हैं, लेकिन उनकी नाक के नीचे ही दिल्ली में कचरे का एक ऐसा पहाड़ खड़ा हो रहा है, जो हर दिन के साथ कुछ और ऊंचा उठ जाता है। यह सब भयावह है। इसमें कोई दो राय नहीं कि भारत सहित पूरे विश्व को जलवायु परिवर्तन की समस्या से निपटने के लिए अभी लंबी दूरी तय करनी होगी और इसमें सरकारों के साथ-साथ व्यापक जनजागरूकता एवं जनभागीदारी की आवश्यकता होगी।

चंदन कुमार, देवघर

पटाखों पर लगे पूर्ण रोक

प्रतिवर्ष दुर्गा पूजा, दशहरा और दिवाली आदि पर्वों पर करोड़ों रुपये के पटाखे और आतिशबाजी से हवा में बेहिसाब जहर घोल दिया जाता है। इससे कानफोड़ू ध्वनि प्रदूषण के साथ इनकी राख आदि की गंदगी अलग से होती है। जलने और अपंग होने के अलावा न जाने कितने जानमाल की हानि का भी कोई हिसाब ही नहीं है। इस बड़ी धन राशि से पौधा रोपण जैसे कार्य भी किए जा सकते हैं जो वास्तव में इन पवित्र पर्वों की महानता को कायम रख सकते हैं। इसलिए पॉलीथिन की तरह इन पर भी तुरंत पूर्ण पाबंदी बहुत जरूरी है।

वेद मामूरपुर, नरेला

राजनीति में आमजन

दैनिक जागरण के तीन अक्टूबर के अंक में प्रकाशित प्रदीप सिंह का लेख, राजनीति की बदलती कार्य संस्कृति, पढ़ा। लेख भारतीय राजनीति में साधारण जन के लिए खुले नए रास्तों की ओर इंगित करता है। मोदी ने न केवल प्रत्याशियों से लेकर मंत्रियों तथा राज्यपालों के चयन में सामान्य हैसियत के व्यक्तियों को आगे बढ़ाने का कार्य किया है, बल्कि सरकार द्वारा नागरिक पुरस्कारों की घोषणा में भी उनकी यह कार्य-प्रणाली बखूबी झलकती है। कई पद्म-विजेता तो आर्थिक दृष्टि से ऐसे दीन-हीन होते हैं कि उनके वस्त्रों व चप्पल आदि से यह बात साफ झलकती है। इस साल 12 कृषकों को पद्मश्री मिला। इन्होंने शून्य बजट की खेती की मिसाल कायम की थी। कई चिकित्सक थे, जो बिना फीस निर्धन रोगियों का सहारा बने हुए हैं। अब पद्म पुरस्कार वस्तुत जन-पुरस्कार बन गए हैं।

amittalmrtw@gmail.com

सोशल मीडिया का बढ़ता प्रभाव

व्यक्ति को समय के साथ परिवर्तित हो जाना चाहिए, अन्यथा वह जिंदगी की दौड़ में पिछड़ जाता है। यह बदलाव किसी रेसिपी की भांति होना चाहिए, जिसमें सभी घटक-द्रव्यों का सही-सही अनुपात हो अन्यथा वह बेस्वाद हो जाती है। ऐसा ही बेस्वाद आज सोशल मीडिया का उपयोग हो गया है। इस आभासी दुनिया ने सामाजिकता की जड़ों में मट्ठा डालना प्रारंभ कर दिया है। व्यक्ति भीड़ में अकेला हो गया है। यह सत्य है कि तकनीक आवश्यकता बन गई है तथा यह पौधों में वाष्पोत्सर्जन की तरह आवश्यक बुराई है, लेकिन इसका अति प्रयोग चरित्र, संस्कार, अनुशासन, सामाजिकता तथा गुणधर्मों को दीमक की तरह चाट रहा है।

डॉ. मनोज कुमार शर्मा, स्याना, बुलंदशहर

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्र